# षट्चत्वारिंशोऽध्यायः

## स्त्रियोंके वस्त्राभूषणोंसे सत्कार करनेकी आवश्यकताका प्रतिपादन

*भीष्म उवाच*

**प्राचेतसस्य वचनं कीर्तयन्ति पुराविदः।**
**यस्याः किंचिन्नाददते ज्ञातयो न स विक्रयः॥ १॥**
**अर्हणं तत्कुमारीणामानृशंस्यतमं च तत्।**
**सर्वं च प्रतिदेयं स्यात् कन्यायै तदशेषतः॥ २॥**

**भीष्मजी कहते हैं**—युधिष्ठिर! प्राचीन इतिहासके जाननेवाले विद्वान् दक्षप्रजापतिके वचनोंको इस प्रकार उद्धृत करते हैं। कन्याके भाई-बन्धु यदि उसके वस्त्र-आभूषणके लिये धन ग्रहण करते हैं और स्वयं उसमेंसे कुछ भी नहीं लेते हैं तो वह कन्याका विक्रय नहीं है। वह तो उन कन्याओंका सत्कारमात्र है। वह परम दयालुतापूर्ण कार्य है। वह सारा धन जो कन्याके लिये ही प्राप्त हुआ हो, सब-का-सब कन्याको ही अर्पित कर देना चाहिये॥ १-२॥

**पितृभिर्भ्रातृभिश्चापि श्वशुरैरथ देवरैः।**
**पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः॥ ३॥**

बहुविध कल्याणकी इच्छा रखनेवाले पिता, भाई, श्वशुर और देवरोंको उचित है कि वे नववधूका

पूजन—वस्त्राभूषणोंद्वारा सत्कार करें॥ ३॥

**यदि वै स्त्री न रोचेत पुमांसं न प्रमोदयेत्।**
**अप्रमोदात् पुनः पुंसः प्रजनो न प्रवर्धते॥ ४॥**
**पूज्या लालयितव्याश्च स्त्रियो नित्यं जनाधिप।**

नरेश्वर! यदि स्त्रीकी रुचि पूर्ण न की जाय तो वह अपने पतिको प्रसन्न नहीं कर सकती और उस अवस्थामें उस पुरुषकी संतानवृद्धि नहीं हो सकती। इसलिये सदा ही स्त्रियोंका सत्कार और दुलार करना चाहिये॥ ४½॥

**स्त्रियो यत्र च पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः॥ ५॥**
**अपूजिताश्च यत्रैताः सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।**

जहाँ स्त्रियोंका आदर-सत्कार होता है वहाँ देवतालोग प्रसन्नतापूर्वक निवास करते हैं तथा जहाँ इनका अनादर होता है वहाँकी सारी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं॥ ५½॥

**तदा चैतत् कुलं नास्ति यदा शोचन्ति जामयः॥ ६॥**
**जामीशप्तानि गेहानि निकृत्तानीव कृत्यया।**
**नैव भान्ति न वर्धन्ते श्रिया हीनानि पार्थिव॥ ७॥**

जब कुलकी बहू-बेटियाँ दुःख मिलनेके कारण शोकमग्न होती हैं तब उस कुलका नाश हो जाता है। वे खिन्न होकर जिन घरोंको शाप दे देती हैं, वे कृत्याके द्वारा नष्ट हुए के समान उजाड़ हो जाते हैं। पृथ्वीनाथ! वे श्रीहीन गृह न तो शोभा पाते हैं और न उनकी वृद्धि ही होती है॥ ६-७॥

**स्त्रियः पुंसां परिददे मनुर्जिगमिषुर्दिवम्।**
**अबलाः स्वल्पकौपीनाः सुहृदः सत्यजिष्णवः॥ ८॥**
**ईर्षवो मानकामाश्च चण्डाश्च सुहृदोऽबुधाः।**
**स्त्रियस्तु मानमर्हन्ति ता मानयत मानवाः॥ ९॥**
**स्त्रीप्रत्ययो हि वै धर्मो रतिभोगाश्च केवलाः।**
**परिचर्या नमस्कारास्तदायत्ता भवन्तु वः॥ १०॥**

महाराज मनु जब स्वर्गको जाने लगे तब उन्होंने स्त्रियोंको पुरुषोंके हाथमें सौंप दिया और कहा—'मनुष्यो! स्त्रियाँ अबला, थोड़ेसे वस्त्रोंसे काम चलानेवाली, अकारण हितसाधन करनेवाली, सत्यलोकको जीतनेकी इच्छावाली (सत्यपरायणा), ईर्ष्यालु, मान चाहनेवाली, अत्यन्त कोप करनेवाली, पुरुषके प्रति मैत्रीभाव रखनेवाली और भोली-भाली होती हैं। स्त्रियाँ सम्मान पानेके योग्य हैं, अतः तुम सब लोग उनका सम्मान करो; क्योंकि स्त्री-जाति ही धर्मकी सिद्धिका मूल कारण है। तुम्हारे रतिभोग, परिचर्या और नमस्कार स्त्रियोंके ही अधीन होंगे॥ ८—१०॥

**उत्पादनमपत्यस्य जातस्य परिपालनम्।**
**प्रीत्यर्थं लोकयात्रायाः पश्यत स्त्रीनिबन्धनम्॥ ११॥**
**सम्मान्यमानाश्चैता हि सर्वकार्याण्यवाप्स्यथ।**

'संतानकी उत्पत्ति, उत्पन्न हुए बालकका लालन-पालन तथा लोकयात्राका प्रसन्नतापूर्वक निर्वाह—इन सबको स्त्रियोंके ही अधीन समझो। यदि तुमलोग स्त्रियोंका सम्मान करोगे तो तुम्हारे सब कार्य सिद्ध होंगे'॥ ११½॥

**विदेहराजदुहिता चात्र श्लोकमगायत॥ १२॥**
**नास्ति यज्ञक्रिया काचिन्न श्राद्धं नोपवासकम्।**
**धर्मः स्वभर्तृशुश्रूषा तया स्वर्गं जयन्त्युत॥ १३॥**

(स्त्रियोंके कर्तव्यके विषयमें) विदेहराज जनककी पुत्रीने एक श्लोकका गान किया है, जिसका सारांश इस प्रकार है—स्त्रीके लिये कोई यज्ञ आदि कर्म, श्राद्ध और उपवास करना आवश्यक नहीं है। उसका धर्म है अपने पतिकी सेवा। उसीसे स्त्रियाँ स्वर्गलोकपर विजय पा लेती हैं॥ १२-१३॥

**पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने।**
**पुत्राश्च स्थाविरे भावे न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥ १४॥**

कुमारावस्थामें स्त्रीकी रक्षा उसका पिता करता है, जवानीमें पति उसका रक्षक है और वृद्धावस्थामें पुत्रगण उसकी रक्षा करते हैं। अतः स्त्रीको कभी स्वतन्त्र नहीं करना चाहिये॥ १४॥

**श्रिय एताः स्त्रियो नाम सत्कार्या भूतिमिच्छता।**
**पालिता निगृहीता च श्रीः स्त्री भवति भारत॥ १५॥**

भरतनन्दन! स्त्रियाँ ही घरकी लक्ष्मी होती हैं। उन्नति चाहनेवाले पुरुषको उनका भलीभाँति सत्कार करना चाहिये। अपने वशमें रखकर उनका पालन करनेसे स्त्री श्री (लक्ष्मी)-का स्वरूप बन जाती है॥

**इति श्रीमहाभारते अनुशासनपर्वणि दानधर्मपर्वणि विवाहधर्मे स्त्रीप्रशंसा नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४६॥**

*इस प्रकार श्रीमहाभारत अनुशासनपर्वके अन्तर्गत दानधर्मपर्वमें विवाहधर्मके प्रसंगमें स्त्रीकी प्रशंसानामक छियालीसवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ४६॥*

# एकोनसप्ततितमोऽध्यायः

## द्रौपदीका चेतावनीयुक्त विलाप एवं भीष्मका वचन

*द्रौपद्युवाच*

**पुरस्तात् करणीयं मे न कृतं कार्यमुत्तरम्।**
**विह्वलास्मि कृतानेन कर्षता बलिना बलात्॥ १॥**

**द्रौपदी बोली**—हाय! मेरा जो कार्य सबसे पहले करनेका था, वह अभीतक नहीं हुआ। मुझे अब वह कार्य कर लेना चाहिये। इस बलवान् दुरात्मा दुःशासनने मुझे बलपूर्वक घसीटकर व्याकुल कर दिया है॥ १॥

**अभिवादं करोम्येषां कुरूणां कुरुसंसदि।**
**न मे स्यादपराधोऽयं यदिदं न कृतं मया॥ २॥**

कौरवोंकी सभामें मैं समस्त कुरुवंशी महात्माओंको प्रणाम करती हूँ। मैंने घबराहटके कारण पहले प्रणाम नहीं किया; अतः यह मेरा अपराध न माना जाय॥ २॥

*वैशम्पायन उवाच*

**सा तेन च समाधूता दुःखेन च तपस्विनी।**
**पतिता विललापेदं सभायामतथोचिता॥ ३॥**

**वैशम्पायनजी कहते हैं**—जनमेजय! दुःशासनके बार-बार खींचनेसे तपस्विनी द्रौपदी पृथ्वीपर गिर पड़ी और उस सभामें अत्यन्त दुःखित हो विलाप करने लगी। वह जिस दुरवस्थामें पड़ी थी, उसके योग्य कदापि न थी॥ ३॥

*द्रौपद्युवाच*

**स्वयंवरे यास्मि नृपैर्दृष्टा रङ्गे समागतैः।**
**न दृष्टपूर्वा चान्यत्र साहमद्य सभां गता॥ ४॥**

**द्रौपदीने कहा**—हा! मैं स्वयंवरके समय सभामें आयी थी और उस समय रंगभूमिमें पधारे हुए राजाओंने मुझे देखा था। उसके सिवा, अन्य अवसरोंपर कहीं भी आजसे पहले किसीने मुझे नहीं देखा। वही मैं आज सभामें बलपूर्वक लायी गयी हूँ॥ ४॥

**यां न वायुर्न चादित्यो दृष्टवन्तौ पुरा गृहे।**
**साहमद्य सभामध्ये दृश्यास्मि जनसंसदि॥ ५॥**

पहले राजभवनमें रहते हुए जिसे वायु तथा सूर्य भी नहीं देख पाते थे, वही मैं आज इस सभाके भीतर महान् जनसमुदायमें आकर सबके नेत्रोंकी लक्ष्य बन गयी हूँ॥

**यां न मृष्यन्ति वातेन स्पृश्यमानां गृहे पुरा।**
**स्पृश्यमानां सहन्तेऽद्य पाण्डवास्तां दुरात्मना॥ ६॥**

पहले अपने महलमें रहते समय जिसका वायुद्वारा स्पर्श भी पाण्डवोंको सहन नहीं होता था, उसी मुझ द्रौपदीका यह दुरात्मा दुःशासन भरी सभामें स्पर्श कर रहा है, तो भी आज ये पाण्डुकुमार सह रहे हैं॥ ६॥

**मृष्यन्ति कुरवश्चेमे मन्ये कालस्य पर्ययम्।**
**स्नुषां दुहितरं चैव क्लिश्यमानामनर्हतीम्॥ ७॥**

मैं कुरुकुलकी पुत्रवधू एवं पुत्रीतुल्य हूँ। सताये जानेके योग्य नहीं हूँ, फिर भी मुझे यह दारुण क्लेश दिया जा रहा है और ये समस्त कुरुवंशी इसे सहन करते हैं। मैं समझती हूँ, बड़ा विपरीत समय आ गया है॥ ७॥

**किं न्वतः कृपणं भूयो यदहं स्त्री सती शुभा।**
**सभामध्यं विगाहेऽद्य क्व नु धर्मो महीक्षिताम्॥ ८॥**

इससे बढ़कर दयनीय दशा और क्या हो सकती है कि मुझ-जैसी शुभकर्मपरायणा सती-साध्वी स्त्री भरी सभामें विवश करके लायी गयी है। आज राजाओंका धर्म कहाँ चला गया?॥ ८॥

**धर्म्यां स्त्रियं सभां पूर्वे न नयन्तीति नः श्रुतम्।**
**स नष्टः कौरवेयेषु पूर्वो धर्मः सनातनः॥ ९॥**

मैंने सुना है, पहले लोग धर्मपरायणा स्त्रीको कभी सभामें नहीं लाते थे, किंतु इन कौरवोंके समाजमें वह प्राचीन सनातनधर्म नष्ट हो गया है॥ ९॥

**कथं हि भार्या पाण्डूनां पार्षतस्य स्वसा सती।**
**वासुदेवस्य च सखी पार्थिवानां सभामियाम्॥ १०॥**

अन्यथा मैं पाण्डवोंकी पत्नी, धृष्टद्युम्नकी सुशीला बहन और भगवान् श्रीकृष्णकी सखी होकर राजाओंकी इस सभामें कैसे लायी जा सकती थी?॥ १०॥

**तामिमां धर्मराजस्य भार्यां सदृशवर्णजाम्।**
**ब्रूत दासीमदासीं वा तत् करिष्यामि कौरवाः॥ ११॥**

कौरवो! मैं धर्मराज युधिष्ठिरकी धर्मपत्नी तथा उनके समान वर्णकी कन्या हूँ। आपलोग बतावें, मैं दासी हूँ या अदासी? आप जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूँगी॥ ११॥

**अयं मां सुदृढं क्षुद्रः कौरवाणां यशोहरः।**
**क्लिश्नाति नाहं तत् सोढुं चिरं शक्ष्यामि कौरवाः॥ १२॥**

कुरुवंशी क्षत्रियो! यह कुरुकुलकी कीर्तिमें कलंक लगानेवाला नीच दुःशासन मुझे बहुत कष्ट दे रहा है। मैं इस क्लेशको देरतक नहीं सह सकूँगी॥ १२॥

**जितां वाप्यजितां वापि मन्यध्वं मां यथा नृपाः।**
**तथा प्रत्युक्तमिच्छामि तत् करिष्यामि कौरवाः॥ १३॥**

कुरुवंशियो! आप क्या मानते हैं? मैं जीती गयी हूँ या नहीं। मैं आपके मुँहसे इसका ठीक-ठीक उत्तर

सुनना चाहती हूँ। फिर उसीके अनुसार कार्य करूँगी॥ १३॥

*भीष्म उवाच*

**उक्तवानस्मि कल्याणि धर्मस्य परमा गतिः।**
**लोके न शक्यते ज्ञातुमपि** विज्ञैर्महात्मभिः॥ १४॥

**भीष्मजीने कहा**—कल्याणि! मैं पहले ही कह चुका हूँ कि धर्मकी गति बड़ी सूक्ष्म है। लोकमें विज्ञ महात्मा भी उसे ठीक-ठीक नहीं जान सकते॥ १४॥

**बलवांश्च यथा धर्मं लोके पश्यति पूरुषः।**
**स धर्मो धर्मवेलायां** भवत्यभिहतः परः॥ १५॥

संसारमें बलवान् मनुष्य जिसको धर्म समझता है, धर्मविचारके समय लोग उसीको धर्म मान लेते हैं और बलहीन पुरुष जो धर्म बतलाता है, वह बलवान् पुरुषके बताये धर्मसे दब जाता है (अतः इस समय कर्ण और दुर्योधनका बताया हुआ धर्म ही सर्वोपरि हो रहा है।)॥

**न विवेक्तुं च ते प्रश्नमिमं शक्नोमि निश्चयात्।**
**सूक्ष्मत्वाद् गहनत्वाच्च कार्यस्यास्य च गौरवात्॥ १६॥**

मैं तो धर्मका स्वरूप सूक्ष्म और गहन होनेके कारण तथा इस धर्मनिर्णयके कार्यके अत्यन्त गुरुतर होनेसे तुम्हारे इस प्रश्नका निश्चितरूपसे यथार्थ विवेचन नहीं कर सकता॥

**नूनमन्तः कुलस्यायं भविता नचिरादिव।**
**तथा हि कुरवः सर्वे** लोभमोहपरायणाः॥ १७॥

अवश्य ही बहुत शीघ्र इस कुलका नाश होनेवाला है; क्योंकि समस्त कौरव लोभ और मोहके वशीभूत हो गये हैं॥ १७॥

**कुलेषु जाताः कल्याणि व्यसनैराहता भृशम्।**
**धर्म्यान्मार्गान्न च्यवन्ते येषां नस्त्वं वधूः स्थिता॥ १८॥**

कल्याणि! तुम जिनकी पत्नी हो, वे पाण्डव हमारे उत्तम कुलमें उत्पन्न हैं और भारी-से-भारी संकटमें पड़कर भी धर्मके मार्गसे विचलित नहीं होते हैं॥ १८॥

**उपपन्नं च पाञ्चालि तवेदं वृत्तमीदृशम्।**
**यत् कृच्छ्रमपि सम्प्राप्ता धर्ममेवान्ववेक्षसे॥ १९॥**

पांचालराजकुमारी! तुम्हारा यह आचार-व्यवहार तुम्हारे योग्य ही है; क्योंकि भारी संकटमें पड़कर भी तुम धर्मकी ओर ही देख रही हो॥ १९॥

**एते द्रोणादयश्चैव वृद्धा धर्मविदो जनाः।**
**शून्यैः शरीरैरस्तिष्ठन्ति गतासव इवानताः॥ २०॥**
**युधिष्ठिरस्तु प्रश्नेऽस्मिन् प्रमाणमिति मे मतिः।**
**अजितां वा जितां वेति स्वयं व्याहर्तुमर्हति॥ २१॥**

ये द्रोणाचार्य आदि वृद्ध एवं धर्मज्ञ पुरुष भी सिर लटकाये शून्य शरीरसे इस प्रकार बैठे हैं; मानो निष्प्राण हो गये हों। मेरी राय यह है कि इस प्रश्नका निर्णय करनेके लिये धर्मराज युधिष्ठिर ही सबसे प्रामाणिक व्यक्ति हैं। तुम जीती गयी हो या नहीं? यह बात स्वयं इन्हें बतलानी चाहिये॥ २०-२१॥

**इति श्रीमहाभारते सभापर्वणि द्यूतपर्वणि भीष्मवाक्ये एकोनसप्ततितमोऽध्यायः॥ ६९॥**

*इस प्रकार श्रीमहाभारत सभापर्वके अन्तर्गत द्यूतपर्वमें भीष्मवाक्यविषयक उनहत्तरवाँ अध्याय पूरा हुआ॥ ६९॥*